सत्यमेव जयते

भारत सरकार

भारत का विधि आयोग

एक-सौ तीसवीं रिपोर्ट

संविदा में अनुचित निबन्धन

मई: 1984

न्यायमूर्ति के. के. मैथ्यू

अ. शा. फाइल सं. 2(15)/83-वि.आ.

तारीख 28 जुलाई, 1980

प्रिय मंत्री जी,

मैं इस पत्र के साथ विधि आयोग की एक-सौ तीनवीं रिपोर्ट भेज रहा हूं जो "संविदा में अनुचित निबन्धन" के संबंध में है। विधि आयोग ने स्वप्रेरणा से इस विषय पर विचार करने का निश्चय किया है था।

इस रिपोर्ट को तैयार करने में श्री वेपा पी. सारथी, अंशकालिक सदस्य, और श्री ए. के. श्रीनिवासमूर्ति, सदस्य-सचिव, ने जो मूल्यवान सहायता की है उसके लिए आयोग उनका ऋणी है।

भवदीय,

ह०

(के. के. मैथ्यू)

श्री जगन्नाथ कौशल,
विधि, न्याय और कंपनी कार्य मंत्री,
नई दिल्ली।

संलग्नक : एक-सौ तीनवीं रिपोर्ट

विषय-सूची

पृष्ठ

अध्याय 1

मानक रूप वाली संविदाएं और उनकी प्रकृति

अध्याय 2

ऐसी संविदाओं से उत्पन्न होने वाली समस्या

अध्याय 3

वर्तमान भारतीय अधिनियमित विधि में कमी

अध्याय 4

अन्य देशों में अनुभव

अध्याय 5

कार्यसंचालन-पत्र के बारे में प्राप्त सुझाव और आलोचनाएं

अध्याय 6

आयोग की सिफारिश

अध्याय 1

मानक प्ररूप वाली संविदाएं और उनकी प्रकृति

1.1 औद्योगिक समाज में, चाहे वह उन्नत हो या विकासशील अलग-अलग ग्राहकों की पसन्द के मुताबिक उनकी जरूरतों को पूरा करने वाले अलग-अलग कारीगर धीरे धीरे मिटते जाते हैं क्योंकि उनकी जगह मानकीकृत वस्तुओं का उत्पादन बड़े पैमाने पर होने लगता है। इस प्रकार के मानकीकरण से ग्राहकों के साथ संव्यवहार करने का भी मानकीकरण हो जाता है, अर्थात् ग्राहकों से मानकीकृत संविदाएं की जाती हैं। ऐसी मानकीकृत संविदाएं उन सभी क्षेत्रों में की जाती हैं जहां बड़े पैमाने पर काम होता है/बड़े पैमाने पर काम करने वाले संगठन जब अलग-अलग व्यक्तियों से अनगिनत संविदाएं करते हैं तब प्रत्येक व्यक्ति से अलग-अलग संविदा लिखवाना बहुत कठिन है। उदाहरण के लिए, भारतीय जीवन बीमा निगम प्रतिदिन हजारों पालिसियां जारी करता है। इसी प्रकार रेल प्रशासन को वहन की हजारों संविदाएं करनी पड़ती हैं। इसलिए उनके पास संविदाओं के मानकीकृत प्ररूप रहते हैं जिनमें प्रत्येक व्यक्ति जब खाली जगहों को भर देता है और उस पर अपने हस्ताक्षर कर देता है तब संविदा करने वाले संगठन और व्यक्ति के बीच संपूरित संविदा कायम हो जाती है। ऐसी संविदाओं से मितव्ययता और निश्चितता का लाभ होता है। जैसा कि केसलर[1] ने इसके बारे में यह लिखा है कि "जहां तक उत्पादन और वितरण की लागत में इस प्रकार से हासिल की गई कमी का सम्बन्ध है वह कम कीमत के रूप में प्रकट होती है और इससे अन्ततः पूरे समाज को मानकीकृत संविदाओं का उपयोग करने से फायदा होता है।" मानक संविदाओं की उत्पत्ति।

1.2 ये मानकीकृत संविदाएं वास्तव में अपदेशी (प्रिटेन्डेड) संविदाएं हैं जिनको संविदा का केवल नाम मिल गया है। ये संविदाएं फ्रांसीसी शब्द (कांत्रेकात्स द एढेशन) के आधार पर आसंजन-संविदाएं (कान्ट्रैक्टस आफ एढ़ेशन) कही जाती हैं, क्योंकि इनमें केवल एक इच्छा अनन्यतः प्रधान होती है जो एक पक्षीय इच्छा के रूप में कार्य करती है और इस संविदा के निबन्धन किसी एक व्यक्ति को नहीं बल्कि अनिश्चित संख्या में व्यक्तियों को सामूहिक रूप से लागू होते हैं। इसके मानक निबन्धन और शर्तें एक पक्षकार द्वारा दूसरे पक्षकार को इस आधार पर पेश की जाती हैं कि वह ऐसी संविदा को "स्वीकार करे या छोड़ दे"। मुख्य निबन्धनों को बड़े अक्षरों में मुद्रित किया जाता है किन्तु अहंकारी बातों (क्वालिफिकेशन्स) को छोटे अक्षरों में इस तरह मुद्रित किया जाता है कि वे तिरोहित हो जाती हैं ऐसी संविदा करने में कोई व्यक्ति इस रूप में भाग लेता है कि उसे इसका पालन करना ही पड़ेगा और वह इस संविदा की दस्तावेज के बारे में अक्सर कुछ जानता ही नहीं जो एकपक्षीय रूप से आरूपित होती हैं और जिसका पालन करने के लिए शक्तिशाली उद्यम (इन्टरप्राइज) द्वारा आग्रह किया जाता है। ऐसी दस्तावेज द्वारा ग्राहक पर अधिरोपित शर्तों के बारे में न तो विचार-विमर्श किया जा सकता है और न पक्षकारों के बीच वार्ता हो सकती है किन्तु संविदा को सम्पूर्ण रूप में स्वीकार या इन्कार करना पड़ता है। इन संविदाओं का उत्पादन मुद्रण करने वाले प्रेस द्वारा किया जाता है। बिन्दुकित रेखा पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति की लिखावट उसके निबन्धनों के बारे में सारवान् रूप से उसकी रजामन्दी वास्तव में प्रकट नहीं करती किन्तु यह कल्पना उत्पन्न करती है कि वह उन निबन्धनों के लिए राजी है। ऐसी संविदा के साथ सामान्यतया और परम्परागत रूप से जुड़ी हुई विलक्षणताएं, जैसे कि संविदा करने की स्वतंत्रता और सर्वसम्मति, इन तथाकथित संविदाओं में नहीं पाई जातीं। उनकी वास्तविक प्रकृति

---

1. (1943 कोलम्बिया ला रिव्यू, 629, कान्ट्रैक्ट्स ऑफ एडहेशन—सम थॉट्स एबाउट फ्रीडम आफ कान्ट्रैक्ट)

अध्याय 2

ऐसी संविदाओं से उत्पन्न होने वाली समस्या

मानक प्ररूपों के दुरुपयोग की सम्भावना

2.1 इस तथ्य के अतिरिक्त कि विचार-विमर्श और वार्ता के जरिए किए गए करार के रूप में संविदा के निरपेक्ष विधिक सिद्धान्त को पूर्णतया छोड़ दिया जाता है, ये संविदाएं इस रूप में प्रकट होती हैं मानों बड़े कारोबारी उद्यमों ने वास्तव में प्राधिकारपूर्ण रीति से उनके लिए विधि बनाया हो। बड़े पैमाने पर कारबार करने वाले ऐसे समुत्थान विशेषज्ञों की सलाह प्राप्त कर लेते हैं और मुद्रित प्ररूपों में ऐसे निबन्धन रख देते हैं जो उनके लिए अत्यन्त अनुकूल होते हैं। इस प्ररूपों में ऐसे अनेक अपवर्जन और अपवाद के खण्ड होते हैं जो बड़े उद्यमों के लिए अनुकूल होते हैं। ऐसे उद्यमों को सौदा करने की जो वरिष्ठ शक्ति प्राप्त है उसके परिणाम-स्वरूप कड़े निबन्धन अधिरोपित करने के विचार से ये खण्ड इन प्ररूपों में सदैव नहीं रखे जाते बल्कि इन कारणों से रखे जाते हैं :—(क) जिनके बारे में एक वाणिज्यिक उद्यम के कार्यकारी ने यह टिप्पणी की है कि "हमें अपने वकीलों पर यह विश्वास है कि वे हमें झंझट से बचा लेंगे लेकिन हमें उन पर यह विश्वास नहीं कि वे हमें किसी झंझट में नहीं डालेंगे" (ख) जब परिनिर्धारित नुकसानी से सम्बन्धित खण्डों को इन प्ररूपों में रखा जाता है तब उद्यम यह महसूस करता है कि ऐसा करना नुकसानी का पूर्वानुमान करने के लिए वास्तविक प्रयास है।(ग) न्यायालय में कार्यवाहियों से बचने की इच्छा, और (घ) अन्य प्रत्येक उद्यम भी ऐसा ही करता है। ये अनुकूल निबन्धन अक्सर छोटे अक्षरों में मुद्रित रहते हैं जिन्हें संविदा करने वाला व्यक्ति कभी पढ़ता ही नहीं। न पढ़ने का कारण यह है कि यह पता लगाना कि ये निबन्धन क्या हैं, बहुत मेहनत का काम है और उससे कोई फायदा भी नहीं है। कोई व्यक्ति किसी निबन्धन में कोई परिवर्तन करने का सौदा नहीं कर सकता क्योंकि उसे बड़े भारी संगठन के प्रस्ताव (आफर) को स्वीकार करना ही है, चाहे वह उन निबन्धनों को पसंद करता हो या नहीं। वे इसलिए [illegible] स्वीकार करे या छोड़ दे। [illegible] एकाधिकार नहीं भी है तो भी इसी प्रकार सभी वाणिज्यिक उद्यम अपनी मानक प्ररूप वाली संविदाओं में एक जैसा अपवर्जन खण्ड रख देते हैं और क्योंकि अकेला ग्राहक अन्यत्र जा नहीं सकता इसलिए इस मामले में उसकी न तो कोई अपनी पसन्द है और न उसे कोई स्वतंत्रता है बल्कि उसे उन्हीं निबन्धनों को स्वीकार करना है जो उसको प्रस्तुत किए जाएं क्योंकि वह उनके बारे में बात नहीं कर सकता। इससे संविदा करने वाले संगठन को उस व्यक्ति की मजबूरी के कारण शोषण करने का और उस पर ऐसे खण्ड अधिरोपित करने का अवसर मिल जाता है जो संविदा के अधीन सभी दायित्वों से उस संगठन को मुक्त कर सकते हैं और प्रायः मुक्त कर भी देते हैं।

दृष्टान्त स्वरूप मामले (वाहक)।

2.2 ऊपर बतायी गई समस्या के दृष्टांत स्वरूप कुछ मामले, जो वाहकों के सम्बन्ध में हैं; नीचे उद्धृत किए जाते हैं :—

मद्रास उच्च न्यायालय ने यह अधिनिर्धारित किया है कि (1) सामान्य वाहक वह व्यक्ति है जो अपने को प्रत्येक व्यक्ति का माल वहन करने के लिए तैयार करते रहने की स्वीकारोक्ति करता है। उसे उस माल के बारे में, जो उसे सौंपा गया है, बीमाकर्ता की स्थिति में माना जाता है और इसलिए उसका दायित्व अधिक है। (2) किन्तु जब पक्षकारों के बीच यह अभिव्यक्त रूप से अनुबन्धित है कि वाहक सामान्य वाहक नहीं है तब इससे यह निश्चायक रूप में दर्शित होता है कि वाहक सामान्य वाहक के रूप में दायित्व के अधीन नहीं है और यदि वाहक को सामान्य वाहक समझ लेने की या इस रूप में दायित्व के अधीन होने की उपधारणा कर भी ली जाए तो भी ऐसा वाहक सामान्य वाहक के दायित्व से अपना छुटकारा पा सकता था या अपने दायित्व की सीमा निश्चित कर सकता है।[1]

1. इंडियन एयरलाइन्स कारपोरेशन बनाम जैठाजी भनीराम, ए. आई. आर. 1959 मद्रास 235

2.3 असम उच्च न्यायालय[1] ने यह अधिनिर्धारित किया है कि विमान से वहन करने वाले ऐसे अन्तर्देशीय वाहक के दायित्व को जिसे भारतीय विमान वहन अधिनियम, 1934 या वाहक अधिनियम, 1865 लागू नहीं होता है, इंगलिश कामन ला लागू होता है और उसे भारतीय संविदा अधिनियम लागू नहीं होता है।

इंगलिश कामन ला के अधीन वाहक का दायित्व केवल उपनिहिती का दायित्व नहीं है बल्कि माल के बीमाकर्ता का भी दायित्व है जिससे कि वहवाहक उस माल की, जो उसे वहन करने के लिए परिदत्त किया जाता है, हुई हानि या नुकसान का लेखा देने के लिए बाध्य है, परन्तु तब जब कि हानि या नुकसान किसी दैवकृत कार्य या राजा (किंग) के शत्रुओं के किसी कार्य के कारण या वहन की जाने वाली वस्तु में अन्तर्निहित खराबी के कारण हुआ है। किन्तु कामन ला वाहक को इस बात की समान स्वतंत्रता प्रदान करता है कि वह परेषक (माल भेजने वाले) से कोई संविदा करके अपने दायित्व को सीमित कर सकता है। ऐसी दशा में उसका दायित्व संविदा के निबन्धनों या उन शर्तों के अनुसार होता है जिनके अधीन उसने वहन किए जाने वाले माल का परिदान स्वीकार किया है। ऐसी संविदा के निबन्धन दूरगामी, परिणाम वाले हो सकते हैं और पक्षकार माल ढोने के लिए प्रभारित उच्चतर या निम्नतर रकम के प्रतिफल में छूट पाने के लिए अवश्य ही दावा कर सकता है, भले ही हानि या नुकसान उसके सेवकों द्वारा की गई उपेक्षा या अवचार या किसी भी अन्य परिस्थिति के कारण हुआ हो। इस प्रकार की संविदा चाहे कितनी भी आश्चर्यजनक हो फिर भी इंगलैण्ड के कामन ला द्वारा मान्य ताप्राप्त है और भारत में न्यायालयों द्वारा अपनाई गई विधि की यही स्थिति प्रतीत होती है। विमान से वहन की संविदा में वाहक को दायित्वपूर्ण उन्मुक्ति देने वाले खण्ड पर कोई आक्षेप इस आधार पर नहीं किया जा सकता वह संविदा अधिनियम की धारा 23 के विरुद्ध है क्योंकि उच्च न्यायालय के मतानुसार ऐसे मामले को संविदा अधिनियम लागू नहीं होता है और इसके बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि यह लोकनीति के विरुद्ध है।

2.4 कलकत्ता उच्च न्यायालय[2] को एक ऐसे मामले पर विचार करना पड़ा था जो भारत के अन्दर विमान से यात्रा करने वाले यात्री के बारे में था। विमान गिर कर चकनाचूर हो गया जिससे उस यात्री की मृत्यु हो गई और उसकी विधवा ने नुकसानी का वाद लाया हवाई टिकट में वाहक को उसके द्वारा या उसके पाइलट या अन्य कर्मचारिवृन्द द्वारा की किसी उपेक्षा के कारण होने वाले दायित्व में छूट दी गई थी। इस बात का साक्ष्य मौजूद था कि वाहक को छूट देने वाली शर्तों की सम्यक रूप से जानकारी यात्री को दे दी गई थी और उनके बारे में जानने का प्रत्येक अवसर प्राप्त था। उच्च न्यायालय[3] ने यह अभिनिर्धारित कि कि प्रिवी कौंसिल ने यह अभिनिर्धारित किया है कि भारत में सामान्य वाहक पर विधि द्वारा अधिरोपित बाध्यता संविदा पर आधारित नहीं है बल्कि पारिश्रमिक के लिए लोक-नियोजन के प्रयोग पर आधारित है, अर्थात इंगलैंड के कामन ला द्वारा अधिरोपित है जो ऐसे सामान्य वाहकों के अधिकारों और दायित्वों को लागू होता है। इस पर भारतीय संविदा अधिनियम 1872 का प्रभाव नहीं पड़ता है। इसलिए 1872 के भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 23 के संदर्भ में छूट देने वाले खण्ड की विधिमान्यता की जाँच करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। यह एक ऐसा मामला है जिसमें वाहक ने यह कहा कि वह यात्री को विमान से ले जाने के लिए तैयार है परन्तु तब जब कि यात्री उसे उपेक्षा के कारण उत्पन्न होने वाले दायित्व से छूट दे दे। संविदा में छूट देने वाला खण्ड ठीक और विधिमान्य था और वह वादी के दावे को पूर्ण रूप से वर्जित करता था। भारतीय विमान वहन अधिनियम, 1934 लागू नहीं किया गया था क्योंकि इस अधिनियम को लागू करने की अपेक्षित अधिसूचना जारी नहीं की गई थी।

---

1. रुकमानन्द बनाम एयरवेज (इंडिया) लिमिटेड, ए. आई. आर. 1960 असम 11

2. इंडियन एयरलाइन्स कारपोरेशन बनाम माधुरी चौधरी, ए आई. आर. 1965 कलकत्ता 252।

3. इरावाड़ी फ्लोटिला कम्पनी बनाम भगवानदास (1891), आई. आर. 18 आई. ए. 121

2.5. राजस्थान उच्च न्यायालय[1] ने यह अभिनिर्धारित किया है कि—जहाँ कहीं माल के टिकट के मुख भाग पर इस आशय का कि "शर्तों के लिए इसके पृष्ठ भाग को देखिए" शब्द मुद्रित हैं वहाँ सम्बद्ध व्यक्ति को विधि के अनुसार उन शर्तों से बाध्य अभिनिर्धारित किया जाएगा जिनके अधीन रहते हुए टिकट जारी किया जाता है चाहे वह उन शर्तों को, यदि वे टिकट के पृष्ठ भाग पर मुद्रित हैं तो पढ़ने की या यदि टिकट के पृष्ठ भाग पर उनका कथन किया गया है तो, उनको अभिनिश्चित करने की सावधानी बरते या न बरते। किन्तु यदि टिकट के मुख भाग पर मुद्रित शब्दों से यह उपदर्शित नहीं होता कि टिकट को कुछ शर्तों के अधीन रहते हुए जारी किया गया है और उस पर केवल इस आशय के शब्द हैं कि "पृष्ठ भाग देखिए" तो यह तथ्य का प्रश्न है कि वाहक ने ऐसा किया था या नहीं जो सम्बद्ध व्यक्ति को शर्तों की सूचना देने के लिए उचित रूप से पर्याप्त था। यदि शर्तें टिकट के पृष्ठ भाग पर मुद्रित हैं किन्तु उसके मुख भाग पर ऐसा कोई भी शब्द नहीं है जो सम्बन्ध व्यक्ति का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट करे तो यह अभिनिर्धारित किया गया है कि वह उन शर्तों से बाध्य नहीं है। वर्तमान मामले में टिकट के मुख भाग पर इस आशय की घोषणा की गई थी कि परेषक (माल भेजने वाले) को परेषण रसीद के पृष्ठ भाग पर की शर्तों की पूरी जानकारी है और उसने उन शर्तों को स्वीकार किया है। कोई भी प्रबुद्ध परेषक टिकट को यह देखने के लिए पढ़ता कि उसके माल और देय परिवहन-प्रभार ठीक-ठीक दर्ज किए गए हैं और ऐसा करने में उसने उक्त घोषणा पढ़ी होगी या यदि वह अंग्रेजी नहीं जानता था तो उसने अंग्रेजी जानने वाले किसी अन्य व्यक्ति से उसे पढ़वाया होता जिसको यह मालूम हो जाता कि टिकट के पृष्ठ भाग पर मुद्रित शर्तों के अधीन रहते हुए माल भेजा जाना था। यह अवश्य मान लिया जाना चाहिए कि ऐसे व्यक्ति को जानकारी थी क्योंकि उसे जानकारी प्राप्त करने के साधन उपलब्ध थे, चाहे उसने इन साधनों का उपभोग किया हो या नहीं। यदि उसने ऐसा नहीं किया था तो उसको अपनी असावधानी के परिणाम अवश्य भुगतना चाहिए।

2.6. हमारे दृष्टिकोण से निर्णायक प्रश्न यह है कि:—यह उपधारणा कर ली जाए कि वह शर्तों के बारे में जानता था तब वह यदि उनमें परिवर्तन करना चाहता था तो क्या वह ऐसा करने के लिए वार्ता कर सकता था? यदि वह वार्ता नहीं कर सकता था तो उसे क्या होता है और न्यायालय किस प्रकार से उसकी सहायता कर सकते हैं?

---

1 [illegible] 89

अध्याय 3

वर्तमान भारतीय अधिनियमित विधि में कमी

3.1 बहुत पहले सन 1909 में न्यायमूर्ति शंकरन नायर ने अपनी विसम्मति प्रकट करने वाले निर्णय में यह राय जाहिर की थी कि ऐसे छूट देने वाले खण्ड संविदा अधिनियम की धारा 23 के विरूद्ध हैं किन्तु उच्च न्यायालय ने पश्चात्वर्ती विनिश्चयों में इस विचार को अस्वीकार कर दिया जिसका उल्लेख पहले ही किया गया है[2]। संविदा अधिनियम की धारा 23 के लागू न होने का अभिनिर्धारित किया जाना।

3.2. ऐसे थोड़े से मामले हैं जिनमें न्यायालयों ने कमजोर पक्षकार की सहायता करने के लिए साहसपूर्वक प्रयास किया। किन्तु ऐसे विनिश्चयों का विधिक आधार भ्रामक है उदाहरण के लिए, मद्रास उच्च न्यायालय[3] ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी के रेल-प्रशासन को गुड़ प्रदाय करने की संविदा में ऐसा खण्ड, जो प्रशासन को किसी भी प्रक्रम पर संविदा रद्द करने के लिए शसक्त करता है, शून्य और लोकात्मा विरुद्ध है। उच्चतम न्यायालय[4] ने उच्च न्यायालय के निर्णय की पुष्टि एक भिन्न आधार पर की थी उच्चतम न्यायालय ने संविदा में रखे गए खण्ड की विधिमान्यता के बारे में कोई निर्णय नहीं सुनाया। दृष्टान्त स्वरूप मामले जिनमें न्यायालयों द्वारा कमजोर पक्षकार को राहत दी गई।

मद्रास उच्च न्यायालय[5] के एक अन्य मामले में अपीलार्थी की लाण्ड्री (धुलाईखाना) की रसीद में यह शर्त लिखी थी कि धुलाई के लिए दी गई वस्तुओं की हानि या नुकसान होने की दशा में ग्राहक उन वस्तुओं की बाजार-कीमत या मूल्य के केवल पचास प्रतिशत के के लिए दावा करने का हकदार होगा। प्रत्यर्थी की नई साड़ी खो गई। न्यायालय ने या अभिनिर्धारित करते हुए ग्राहक को राहत दी कि ऐसी शर्तें से बेइमानी को बढ़ावा मिलेगा क्योंकि क्लीनर (धुलाई करने वाले) इससे नए कपड़े उनकी कीमत के पचास प्रतिशत पर खरीद सकेगा।

कर्नाटक[6] के एक मामले में भी ऐसी ही एक शर्त को, जो हानि होने की दशा में कपड़े की धुलाई का केवल आठ गुना भुगतान किए जाने के लिए थी, अनुचित अभिनिर्धारित किया गया था। प्रतिवादी द्वारा वादी को किशन का प्रदाय करने की संविदा के मामले में य संविदा के अनुसार प्रतिवादी के पास यह अधिकार आरक्षित था कि वह वादी से व्यापार करने के काम (डीलरशिप) के कोई कारण बताए बिना किसी भी समय रद्द कर सकता है। प्रतिवादी द्वारा रद्द कर दिए जाने पर वादी ने वाद फाइल किया और वाद की डिग्री इस आधार पर की गई कि यह निबन्धन संविदा में एक अनुचित निबन्धन था। मद्रास[8] के एक अन्य मामले में अर्जीदार ने एक रैफल (लाटरी) में अपने द्वारा खरीदे गए टिकट पर इनाम जीता लेकिन वह उस इनाम को अपने बैंकरों की उपेक्षा के कारण तीन मास के अन्दर नहीं ले सका। प्रत्यर्थी ने यह दावा किया कि यह धन राज्य को उस नियम के अधीन चला गया जिसे संविधा का एक भाग बनाया गया था। उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यदि संविदा के निबन्धन लोकात्मा विरुद्ध हैं और यदि निबन्धनों

1 शेख मोहम्मद......बनाम बी. आई. एस. एन. कम्पनी (1909) आई. एल. आर. 32 मद्रास 95

2 पिछला पैरा 2.3 और 2.4

3 एम. यथैया बनाम यूनियन आफ इंडिया, ए. आई. आर. 1957 मद्रास 82

4 ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1724

5 लिली व्हाइट बनाम आर. मुनुस्वामी, ए. आई. आर. 1966 मद्रास 13

6 एन. सिद्धलिंगप्पा बनाम टी. नटराज ए. आई. आर. 1970 मैसूर, 154

7 इन्टरनेशनल आयल कम्पनी बनाम इंडियन आयल कम्पनी ए. आई. आर. 1969, मद्रास 4

8 रामुलु बनाम डाइरेक्टर, तामिल नाडू रैफैल्स (1972) 2 एम. एल. जे. 237

में से कोई एक निबन्धन भय पैदा करने के लिए (इन टैरोरम) है और किसी ऐसे प्रतिफल के बिना है जो विधि में अज्ञात है तो वह लोक नीति के विरुद्ध है और इससे पीड़ित पक्षकार राहत के लिए न्यायालय में वाद ला सकता है। किन्तु न्यायालय ने ऐसी किसी कसौटी का अधिकथन नहीं किया कि कब कोई निबन्धन लोकात्मा और लोकनीति के विरुद्ध होगा। भारत में न्यायालय इंगलैंड के विनिश्चयों से अपने को बाध्य महसूस करते हुए कुछ कारणों से लोकनीति की मदों का विस्तार करने में अनिच्छुक हैं। किन्तु इसके साथ ही यह भी स्वीकार करना होगा कि न्यायाधीशों की व्यक्तिगत धारणाओं के अनुसार लोक-नीति की मदों का स्वतंत्र रूप से विस्तार संकटपूर्ण है। तब उपभोक्ता को क्या उपचार उपलब्ध है या उसे कोई भी उपचार उपलब्ध नहीं है? जिन विनिश्चयों में उपभोक्ता को राहत दी गई थी वे इंगलैंड के न्यायालयों के निर्णयों में अभिव्यक्त विचारों पर आधारित हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि वे भारतीय विधि के किसी विधिक सिद्धांत पर आधारित नहीं हैं। ऐसे विनिश्चय इन बातों पर आधारित हैं (क) निबन्धन का लोकात्मा-विरुद्ध होना (ख) निबन्धन का अनुचित होना (ग) निबन्धन का लोकहित में न होना (घ) निबन्धन का लोक-नीति के विरुद्ध होना।

स्थिति का सामना करने में संविदा अधिनियम में कमी

3.3. जब संविदा के पक्षकारों में से किसी पक्षकार को प्रस्तुत (आफर) किए गए निबन्धन स्वीकार करना व्यावहारिक रूप से असम्भव है तब उस संविदा का यह समस्त आधार कि वह पक्षकारों द्वारा स्वतंत्रतापूर्वक और स्वेच्छा से सौदा करने की समान शक्ति रखते हुए की गई थी पूर्णतया निरर्थक हो जाता है। संविदा करने की स्वतंत्रता को वास्तविकता प्रदान करने की दृष्टि से और विशेषकर इसलिए कि संविदा के एक पक्षकार की दूसरे पक्षकार की अपेक्षा सौदा करने की शक्ति कम है, अनेक अध्युपाय किए गए हैं, जैसे श्रम विधान, साहुकारी से सम्बन्धित विधियां और औटक अधिनियम, अधिनियमित किए गए हैं किन्तु संविदा अधिनियम में ऐसा कोई साधारण उपबन्ध नहीं है जिसके अधीन न्यायालय कमजोर पक्षकार को राहत दे सके। ऐसा प्रतीत होता है संविदा अधिनियम इस रिष्टि (मिसचीफ) को दूर करने में समर्थ नहीं है।

धारा 16(3)

3.4 संविदा अधिनियम की धारा 16 (3) में यह उपबंध है कि, जहां कि कोई व्यक्ति, जो अन्य की इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में है, उसके साथ संविदा करता है और वह संव्यवहार प्रत्यक्षतः या दिए गए साक्ष्य से लोकात्मा विरुद्ध प्रतीत होता है, वहाँ यह सिद्ध करने का भार कि ऐसी संविदा असम्यक् असर से उत्प्रेरित नहीं की गई थी उस व्यक्ति पर होगा जो उस अन्य की इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में था। किन्तु इस उपधारा का निर्वाचन[1] इस अर्थ में किया गया है कि अधिशासित करने की स्थिति और संविदा का लोकात्मा के विरुद्ध होना इन दोनों तत्वों को संविदा के बारे में यह कहने से पहले सिद्ध करना होगा कि वह संविदा असम्यक् असर डाल कर की गई थी। यद्यपि यह विनिश्चय बहुत समय पहले किया गया था तथापि इसका विचलन नहीं हुआ जिसके परिणामस्वरूप वर्तमान संदर्भ में धारा 16(3) बहुत सुसंगत नहीं है।

धारा 23

3.5 संविदा अधिनियम की धारा 23, जिसमें यह उपबन्ध है कि करार का प्रतिफल या उद्देश्य तब के सिवाय विधिपूर्ण होता है जब कि उसे न्यायालय अनैतिक या लोकनीति के विरुद्ध मानता है, वर्तमान स्थिति का सामना करने में बहुत उपयोगी नहीं है क्योंकि न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि लोकनीति की मदों का विस्तार कुछ अपवादों सहित एक नए साधारण आधार तक नहीं किया जा सकता और यदि संविदा का निबन्धन एक पक्षकार को सभी दायित्व से छूट देता है तो वह लोकनीति के विरुद्ध नहीं है।

धारा 28

3.6 संविदा अधिनियम की धारा 28, जिसमें संविदा के अधीन अधिकारों के प्रवर्तन के लिए समय की चर्चा है, एक विशेष स्थिति के सम्बन्ध में है और विधि आयोग ने एक अलग रिपोर्ट में इस पहलू पर विचार किया है।[2]

---

1. मुसायुराई बनाम कन्नप्पा चेट्टियार (1919) आई. एल. आर. 43 मद्रास, 546 (प्रिवी कौंसिल)।
2. भारत के विधि आयोग की सत्तासवीं रिपोर्ट।

धारा 24

3.7 धारा 4 में केवल नुकसानी की मात्रा की चर्चा है और इस धारा का कोई प्रभाव ऐसी संविदा की विधिमान्यता पर नहीं पड़ता है जिसमें पक्षकारों में से किसी एक पक्षकार को दायित्व से छूट दी गई है। केवल एक अन्य धारा पर विचार करना अपेक्षित है और वह है धारा 151 जो उपनिहित को परिदत्त माल की हानि या नुकसान के लिए उप निहिती पर दायित्व निश्चित रूप से अधिरोपित करती है किन्तु न्यायालयों ने लगातार यह दृष्टिकोण अपनाया है कि इस धारा के अधीन दायित्व की छूट देने के बारे में संविदा की जा सकती है।

अन्तिम परिणाम

3.8 अन्तिम परिणाम यह है कि भारतीय संविदा अधिनियम इस समय जिस रूप में है उस रूप में वह बड़ा कारोबार करने वालों से संव्यवहार करने वाले उपभोक्ता को संरक्षण प्रदान नहीं कर सकता। इसके अलावा यह बात भी है कि न्यायालयों ने विधि के किसी विनिर्दिष्ट उपबन्ध या विधि के किसी ज्ञात सिद्धांत के बिना न्याय के प्रति अपनी सहज भावना से प्रेरित होकर इस समस्या के लिए जो हल निकाले हैं उनसे केवल अनिश्चितता और संदिग्धता उत्पन्न होती है।

अध्याय 4

अन्य देशों में अनुभव

यूनाइटेड किंगडम में समस्या पर विचार

4.1 यूनाइटेड किंगडम में अनेक विधिक सिद्धान्तों का उपयोग किया गया है जो लार्ड जस्टिस डैनिंग[1] द्वारा प्रतिपादित इस मूल धारणा पर आधारित है कि "यहां कानून की सतर्कता है जो संविदा करने की स्वतंत्रता देते हुए यह निगरानी भी करता है कि इस स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं किया जा रहा है"। ये सिद्धान्त इस प्रकार है —

(क) अन्य पक्षकार को शर्तों के बारे में उचित सूचना होनी चाहिए, (ख) संविदा की जाने के समय पर ही सूचना होनी चाहिए, (ग) संविदा के मूल तत्व का भंग नहीं होना चाहिए, (घ) वृहत्तर संगठनों के विरुद्ध और कमजोर पक्षकार के पक्ष में संविदा का ठीक-ठीक अर्थान्वियन किया जाना चाहिए, और (ङ) संविदा के निबन्धन प्रत्यक्षतः अनुचित नहीं होने चहिए न्यायालयों ने प्रस्थापक विरोधी नियम (कान्ट्रा प्रौफेरेन्टम) नामक नियम, चारों कोण वाला नियम (फोर कार्नर रूल), गिबाड रूल्स और मूल तत्व के भंग के सिद्धान्त के महत्वपूर्ण उपायों का सहारा लिया है। प्रस्थापक विरोधी नियम (कान्ट्रा प्रौफेरेन्टम) नियम का यह अर्थ है कि अपवर्जन खंड का अवलम्ब लेने वाला व्यक्ति दायित्व से बचना चाहता है और वह केवल उन शब्दों के प्रति निर्देश करके ऐसा कर सकता है जो मामले की परिस्थितियों को स्पष्ट और असंदिग्ध रूप से लागू होते हैं। इस नियम के अधीन यदि संविदा का एक पक्षकार न केवल सावधानी बरतने के कर्तव्य के अधीन है बल्कि किसी अन्य प्रकार के कड़े दायित्व के भी अधीन है तो दायित्व का अपवर्जन करने वाला खंड केवल पश्चात्‌वर्ती दायित्व को लागू होगा, जब तक कि संविदा में प्रयुक्त भाषा से यह स्पष्ट रूप में प्रकट न हो कि वह दोनों प्रकार के दायित्वों को लागू होता है। गिबाड[2] के मामले में वादी ने अपनी साइकिल प्रतिवादी के स्टेशन पर छोड़ दी थी और एक टिकट प्राप्त किया जिसमें प्रतिवादी को दायित्व से छूट देने वाला खंड था। बाइसिकिल को अमानती सामान पर (क्लाक रूम) में नहीं रखा गया था बल्कि उसे बुकिंग हाल में छोड़ दिया गया था जहां से वह चुरा ली गई। कोर्ट आफ अपील ने यह अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादियों को संरक्षण प्राप्त है। यदि इस बात की संविदा होती कि बाइसाइकिल को आवश्यक रूप से क्लाक रूम में रखा जाना था तो प्रतिवादी संविदा के चारों कोणों से बाहर होते और उन्हें छूट देने वाले खंड द्वारा संरक्षण नहीं मिलता क्योंकि यह खंड उन्हें संविदात्मक बाध्यता का पालन करने में ही संरक्षण प्रदान करता और उसनिहिती के रूप में उनकी बाध्यता को संरक्षण प्रदान नहीं करता। लार्ड जस्टिस डैनिंग ने मूल तत्व के भंग के सिद्धान्त का प्रतिपादन निम्नलिखित रूप में किया था :—

"अब यह निश्चित हो गया है कि इस प्रकार के छूट देने वाले खंड, चाहे वे कितने भी व्यापक रूप में अभिव्यक्त किए गए हों, पक्षकार को तभी फायदा पहुंचा सकते हैं जब कि वह अपनी संविदा की आवश्यक बातों को पूरा करते हुए उसे क्रियान्वित कर रहा है। उसे ऐसे खंडों का उपयोग अपचार या उपेक्षा के आरोप से अपने को बचाने के लिए करने की इजाजत नहीं दी जा सकती या वह अपनी बाध्यता का पालन करने से विमुख नहीं हो सकता। छूट देने वाले खंडों के अलावा

[1] जान ली एण्ड सन बनाम रेलवे एक्जीक्यूटिव (1949) 2 आल इंग्लैंड रिपोर्ट 581.

[2] कारसालैस बनाम वलिस (1956) 2 आल. ई० रि. 866.

संविदा पर ध्यान देना और यह देखना आवश्यक है कि कौन से अभिव्यक्त या विवक्षित निबन्धन हैं जो पक्षकार पर बाध्यता अधिरोपित करते हैं। यदि वह ऐसे निबन्धनों का, जो संविदा के ही मूल आधार हैं, भंग करने का दोषी है तो वह छूट देने वाले खंडों का अवलम्ब नहीं ले सकता।"

किन्तु जब इस विचारधारा को हाउस आफ लार्ड्स[1] में अस्वीकार कर दिया गया तब इसे गहरा आघात लगा। लार्ड रीड ने यह कहा है कि ऐसा कोई संकेत नहीं मिलता है कि "न्यायालयों को इस बात पर विचार करना है कि क्या ऐसी छूट सभी परिस्थितियों में कठोर और लोकात्मा विरुद्ध है या ग्राहक ने स्वतंत्रता पूर्वक ऐसी छूट के लिए करार किया था.... मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इसे पार्लमेंट द्वारा हल किए जाने के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए" (अपनी ओर से जोर देने के लिए इसे रेखांकित किया जा रहा है); और लार्ड विलबरफोर्स ने यह स्पष्ट किया है कि यदि निबन्धन आधारभूत या सम्पूर्ण रूप से भंग किया जाने से संविदा का विचलन होता है तो यह प्रश्न उठेगा कि कितना अधिक विचलन हुआ है और यदि इससे भिन्न वस्तु का प्रदाय किया जाने का अर्थ निकलता है तो यह प्रश्न कितना भिन्न हो जाएगा। माननीय न्यायमूर्ति श्री स्कारमैन ने निम्नलिखित कथन किया है[2]:—

"उदाहरण के लिए, संविदा की विधि में यह विचार करना आवश्यक है कि क्या विधि संविदा करने की स्वतंत्रता के सिद्धान्त पर या किसी अन्य सिद्धान्त पर आधारित होनी चाहिए; जैसे कि, क्या विधि केवल उन्हीं सौदों को लागू करेगी जो उचित हैं;—अर्थात ऐसा सिद्धान्त जो पारस्परिक व्यवहार में सद्भावना के हित के लिए संविदात्मक स्वतंत्रता पर कुछ निबंधनों को अधिरोपित करता है। इस सामाजिक प्रश्न का निर्णय करने की आवश्यकता का विशिष्ट दृष्टान्त विधि के सुधार का उस समस्या में पाया जाता है जो विक्रेताओं और अवक्रय-वित्त कम्पनियों के अपने कामन लॉ और कानूनी दायित्वों को संविदा द्वारा त्याग देने के अधिकारों के बारे में उत्पन्न होती है। यह भली भाँति ज्ञात है कि अवक्रय वित्त कंपनियों, भाण्डागारिक (वेयर हाउस मैन) और माल तथा सेवा प्रदायक (सप्लायर) संविदा के ऐसे मानक प्ररूपों का प्रायः उपभोग करते हैं जिनमें प्रदायक के दायित्व को छूट देने वाले या सीमित करने वाले खंड होते हैं ....।"

अनफेयर कान्ट्रेक्ट टर्म्स ऐक्ट, 1977 और उसके उपबन्ध

4.2 इंगलैंड के न्यायालयों ने जिन सिद्धान्तों पर कार्य किया है उनकी आलोचना निम्नलिखित रूप में की गई है[3]।......

"पहली बात यह है कि क्योंकि ये सब इस मान ली गई बात का सहारा लेते हैं कि प्रश्नास्पद खंड प्रयोजन और विषयवस्तु की दृष्टि से अनुज्ञेय हैं इसलिए वे प्रारूपकार की बारबार आलोचना करते हैं। यदि उसे समय दिया जाए तो वह सुधार कर देगा। दूसरी बात यह है कि क्योंकि वे विवाद्यक का सामना नहीं करते इसलिए वे आवश्यक दिशा में न तो ऐसा अनुभव और न प्राधिकार संचित कर पाते हैं जिनके बल पर वे यह निश्चित कर सकें कि किसी एक प्रकार के संव्यवहार को कौन से न्यूनतम औचित्य हैं जिनका पालन किए जाने के लिए न्यायालय यह आग्रह करेगा कि वे इस प्रकार के लागू किए जाने वाले सौदे के लिए आवश्यक हैं या उस प्रकार के सौदे में अन्तर्निहित हैं। तीसरी बात यह है कि क्योंकि वे अर्थान्वियन करने का तात्पर्य रखते हैं किन्तु वास्तव में अर्थान्वियन नहीं करते और यह उनसे आशयित भी नहीं है बल्कि उससे वे साशय और सृजनात्मक मिथ्या अर्थान्वियन करने के पश्चात्वर्ती प्रयासों में पूर्ण रूप से विधि सम्मत ऐसी संविदाओं तथा खंडों के सही अर्थ निकालने के पश्चात्वर्ती प्रयासों में बाधा डालते हैं जिनके अर्थ निकालना आवश्यक होता है बजाए इसके कि

[1] सुसे अटलांटिक सोसाइटे डि एर्मेटेंट मेरीटाइम एस ए बनाम एन वी रोटेरडामसचे केलेन सेंट्राले (1966) 2 आल्इ. आर. 61.

[2] कीले विश्वविद्यालय में विधि सुधार (ला रिफार्म) पर दिए गए लिंडसे स्मारक व्याख्यान (लिन्डसे मेमोरियल लेक्चर्स), नवम्बर, 1967 पृ० 129.

[3] प्रोफेसर लेवेलयन, 52 लार. क्वा. रिव्यू 700.

ऐसा करने से बचा जाए। इसका अन्तिम प्रभाव यह पड़ता है कि अनावश्यक श्रम उत्पन्न होता है और उसके बारे में पूर्वानुमान नहीं किया जा सकता। इसके साथ ही उपचार की कमी और बुराई कायम रहती है जिसे दूर करने के लिए उपचार की आवश्यकता है ..... ।"

इस प्रकार ऐसे सभी प्रयास अधिक उपयोगी नहीं पाए गए और इसीलिए 1977 में ब्रिटिश पार्लियामेंट ने अन्फेयर कान्ट्रेक्ट टर्म्स ऐक्ट[1] (अनुचित संविदा-निबन्धन अधिनियम) पारित किया। इस अधिनियम में उपेक्षा (नेग्लिजेन्स) शब्द की कानूनी परिभाषा उपबंधित है जो अपकृत्य (टार्ट) और संविदा-भंग दोनों से संबंधित मामलों को लागू होती है। इस अधिनियम के अधीन उपेक्षा का अर्थ है—(क) किसी ऐसी बाध्यता का भंग जो संविदा के अभिव्यक्त या विवक्षित निबन्धनों से उत्पन्न होती हो और जो उचित सावधानी या उचित कौशल से संविदा का पालन किए जाने के बारे में हो; (ख) कामन लॉ के किसी ऐसे कर्त्तव्य का भंग जिसे उचित सावधानी या उचित कौशल से किया जाना हो (किन्तु यह कोई कठोरतर कर्त्तव्य न हो) या (ग) सावधानी का किसी ऐसे सामान्य कर्त्तव्य का भंग जो आक्युपायर्स लाइबिल्टी ऐक्ट, 1957 (अधिष्ठाता दायित्व अधिनियम, 1957) द्वारा अधिरोपित है। इस अधिनियम में यह भी उपबंधित है कि संविदा में ऐसा कोई खंड जो उपेक्षा के परिणाम-स्वरूप होने वाली मृत्यु या वैयक्तिक क्षति के दायित्व को अपवर्जित या निर्बन्धित करता है, पूर्णतया शून्य होगा। मृत्यु या वैयक्तिक क्षति से भिन्न अन्य प्रकार की हानि के संबंध में दायित्व को निर्बन्धित या अपवर्जित करने वाला खंड भी शून्य होगा किन्तु तब नहीं जब कि वह उचित होने की अपेक्षाओं को पूरा करता है। उचित होगा इस बात पर निर्भर करेगा कि उन परिस्थितियों में, जिनकी जानकारी या जिनके बारे में परिकल्पना पक्षकारों को होनी चाहिए थी; संविदा के निबन्धन कहां तक अनुचित हैं। इस अधिनियम में यह भी उपबंधित है कि जो व्यक्ति उपभोक्ता से मानक निबंधनों के आधार पर व्यवहार करता है वह यदि स्वयं भंग करता है तो उसे दायित्व को निर्बन्धित या अपवर्जित करने वाले खंड के आधार पर संरक्षण पाने का दावा करने की अनुज्ञा नहीं दी जाएगी। वह संविदा का ऐसे ढंग से पालन कराने के लिए दावा नहीं कर सकता जो उस ढंग से सारतः भिन्न हो जिस ढंग से उसका पालन किए जाने के बारे में उपभोक्ता या ग्राहक उचित रूप में यह आशा करते हैं कि वह संविदा ऐसे कियान्वित की जाएगी जो उसके पालन किए जाने के बराबर होगा।

अमरीका में समस्या पर किस प्रकार से विचार।

4.3 अमरीका में इस संबंध में जो स्थिति है उसका कथन रिस्टेमेन्ट आफ दि ला आफ कान्ट्रेक्ट (संविदा विधि का पुनर्कथन) की धारा 575 में इस प्रकार किया गया है :—

(1) कर्त्तव्य का जानबूझकर किए गए भंग के परिणामों के दायित्व से छूट पाने का सौदा करना अवैध है और उपेक्षा के परिणामों के दायित्व से छूट पाने का सौदा करना तब अवैध है जब कि —

(क) पक्षकार नियोजक और कर्मचारी हैं तथा सौदा नियोजन के दौरान कर्मचारी की उपेक्षापूर्ण क्षति के संबंध में है, या

(ख) पक्षकारों में से एक पक्षकार पर लोक-सेवा का कर्त्तव्यभार है और सौदा लोक के प्रति उसके कर्तव्य के किसी भाग का पालन करने में ऐसी उपेक्षा के संबंध में है जिसके लिए उसने प्रतिकर प्राप्त किया है या उसको प्रतिकर देने की प्रतिज्ञा की गई है।

(2) सामान्य वाहक द्वारा या लोक सेवा के कर्त्तव्य का भारसाधन करने वाले अन्य व्यक्ति द्वारा ऐसा सौदा विधिपूर्ण है जो कर्त्तव्य के बिना जानबूझकर किए गए भंग के कारण संपत्ति की क्षति की वसूलनीय नुकसानी की रकम को उचित करार किए गए मूल्यांकन तक सीमित करने के लिए हो।

---

1. दि अन्फेयर कान्ट्रेक्ट टर्म्स ऐक्ट, 1977

2. धारा 575, रिस्टेटमेन्ट, कान्ट्रेक्ट्स।

यूनिफार्म कमर्शियल कोड
धारा 2.302

4.4 अमरीका के यूनिफार्म कमर्शियल कोड (एक समान वाणिज्यिक संहिता) की धारा 2.302 में भी यह उपबंधित है कि

(i) यदि न्यायालय विधि की दृष्टि से यह निष्कर्ष निकालता है कि जिस समय संविदा की गई थी उस समय वह संविदा या उसका कोई खंड लोकात्मा विरुद्ध है तो न्यायालय उस संविदा को लागू किए जाने से इंकार कर सकता है या लोकात्मा के विरुद्ध खंड के बिना उस संविदा के शेष भाग को लागू कर सकता है या लोकात्मा के विरुद्ध किसी खंड को इस प्रकार सीमित करके लागू कर सकता है जिससे कि लोकात्मा के विरुद्ध परिणाम से बचा जा सके।

(ii) जब यह दावा किया जाता है या न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि संविदा या उसका कोई खंड लोकात्मा विरुद्ध हो सकता है तब न्यायालय को अवधारण करने में सहायता देने के लिए पक्षकारों को संविदा की वाणिज्यिक स्थिति, प्रयोजन और प्रभाव के बारे में साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान किया जाएगा।

इजरायल में समस्या पर किस प्रकार से विचार।

4.5 इजराइल में स्टैण्डर्ड कान्ट्रैक्ट्स ला (मानक संविदा विधि) के अधीन एक उपबंध संविदा के ऐसे मानक प्ररूपों के प्रशासनिक नियंत्रण के लिए है। वहां एक प्रशासनिक बोर्ड है जिसका गठन उद्योग और वाणिज्य के प्रतिनिधियों से होता है। यह बोर्ड छूट देने वाले उन खंडों की विधिमान्यता के बारे में विनिश्चय करता है जो मानक प्ररूपों में सम्मिलित किए जाने हैं। ऐसा करने में बोर्ड उन बातों को ध्यान में रखता है जो उपभोक्ता के हित के प्रतिकूल है और जिनसे प्रदायक को अनुचित लाभ मिल सकता है। बोर्ड साक्ष्य प्राप्त करने के लिए सशक्त है और यदि वह किसी विशिष्ट खंड का अनुमोदन कर देता है तो न्यायालय उस खंड को किसी विशिष्ट अवधि के लिए अविधिमान्य नहीं कर सकता।

असाध्य नियंत्रण।

4.6 हमारे समाज में ऐसा प्रशासनिक नियंत्रण साध्य नहीं हो सकता।

---

2. धारा 2.302, यूनिफार्म कमर्शियल कोड।

1. 66 कोलम्बिया ला रिव्यू, 1340 (1965) 14 दि इन्टरनेशनल एण्ड कम्परेटिव ला क्वार्टरली, 1410

अध्याय 5

कार्यसंचालन पक्ष के बारे में प्राप्त सुझाव और आलोचनाएं

आमंत्रित सुझाव

5.1 विधि आयोग ने भारतीय संविदा अधिनियम के एक उपबन्ध (अध्याय 6 में सुझाव दिए गए तरीके पर) अंत:स्थापित करने के प्रस्ताव के बारे में आलोचनाएं भेजने के लिए जनता को आमंत्रित किया था। इसके उत्तर में निम्नलिखित आलोचनाएं[1] प्राप्त हुई हैं :—

प्राप्त सुझाव

5.2 बम्बई उच्च न्यायालय (अपील पक्ष) के रजिस्ट्रार, हरियाणा सरकार के विधि परामर्शी और सचिव, एक उच्च न्यायालय, उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश और उड़ीसा सरकार के विधि विभाग ने प्रस्ताव के बारे में सहमति प्रकट की है। चार उच्च न्यायालयों को कोई आलोचना नहीं करनी है। उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश ने यह बयान किया है कि "लोकात्माविरुद्ध" अर्थ ग्रहण कर लिया है। महाराष्ट्र सरकार के विधि और न्यायपालिका विभाग ने प्रस्ताव के बारे में सहमति प्रकट करते हुए इंगलिश विधि की तरह एक अधिक विस्तृत उपबन्ध रखने का सुझाव दिया है।

आयोग के विचार

5.3 हमने उपर्युक्त सुझावों पर, जिनके लिए हम आभारी हैं, ध्यान दिया है। किन्तु हमने यह महसूस किया कि धीरे-धीरे आगे बढ़ना बेहतर है और इसलिए हमने इंगलिश विधि की तरह एक विस्तृत अधिनियमिति के बारे में नहीं सोचा है। आयोग ने 22 सितम्बर, 1983 को राज्य सभा में पुर:स्थापित एकाधिकार तथा अवरोधक व्यापारिक व्यवहार (संशोधन) विधेयक (1983 का सं. 37) में सुझाए गए संशोधनों पर भी ध्यान दिया है। ये संशोधन अनफेयर ट्रेड प्रैक्टिसेज (अनुचित व्यापारिक व्यवहार) के सम्बन्ध में हैं और प्रस्तावित संशोधन एकाधिकार तथा अवरोधक व्यापारिक व्यवहार अधिनियम, 1969 में धारा 36क से धारा 36घ तक के रूप में प्रविष्ट किए जाने हैं। हम जो सिफारिश कर रहे हैं उससे इन संशोधनों का विषय-विस्तार भिन्न है।

---

1. विधि आयोग की फाइल सं. एफ 2(15) 83-एल. सी. क्रम सं. 3(आर) से 12 (आर), तक।

अध्याय 6

आयोग की सिफारिश

6.1 इस बुराई को दूर करने के लिए हमारे देश में केवल यही कदम उठाया जा सकता है कि भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 में एक ऐसा उपबन्ध अधिनियमित किया जाए जिसमें इंग्लिश अनफेयर टर्म्स एक्ट 1 और अमरीका के यूनिफार्म कमर्शियल कोड 2 की धारा 2.302 से होने वाले फायदे शामिल होंगे। सिफारिश

6.2 इसलिए विधि आयोग भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 में निम्नलिखित नया अध्याय और नई धारा अन्तःस्थापित करने के लिए इस अधिनियम का संशोधन करने की सिफारिश करता है:— सिफारिश की गई अधिनियमिति के उपबन्ध।

"अध्याय 4-क"

धारा 67 क: (1) जहां कि न्यायालय संविदा के निबन्धनों से या पक्षकारों द्वारा पेश किए गए साक्ष्य से यह निष्कर्ष निकलता है कि वह संविदा या उसका कोई भाग लोकात्मा विरुद्ध है तो न्यायालय उस संविदा को या उसके उस भाग को, जिसे वह लोकात्माविरुद्ध अभिनिर्धारित करता है, लागू करने से इंकार कर सकता है।

(2) इस धारा के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना संविदा या उसका कोई भाग उस दशा में लोकात्माविरुद्ध समझा जाता है जबकि वह किसी पक्षकार को (क) संविदा के जानबूझ कर किए गए भंग के दायित्व से या (ख) उपेक्षा के परिणामों से छूट देता है।"

(के. के. मैथ्यू)
अध्यक्ष

(जे.पी. चतुर्वेदी)
सदस्य

(डा. एम.बी. राव)
सदस्य

(पी.एम. बक्शी)
अंशकालिक सदस्य

(वेपा पी. सारथी)
अंशकालिक सदस्य

(एस.के. श्रीनिवासमूर्ति)
सदस्य-सचिव
तारीख:

---

1. पिछला पैरा 4.2
2. पिछला पैरा 4.4

भ०भा०स०मु०रि०रो०नदि०—9—13लॉ 84—15-1-85—0000